P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-3* ISSUE-4*(Supplementary Issue) July- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

हिन्दी स्तंभ–लेखन की परंपरा और हरिशंकर परसाई

दीप नारायण चौहान
शोधार्थी
हिन्दी विभाग,
विद्यासागर यूनिवर्सिटी,
मिदनापुर, पश्चिम बंगाल

सारांश

भले ही हिन्दी में स्तम्भ लेखन की सैद्धांतिकीं व तात्विक विश्लेशण का अभाव हो, हिन्दी की आधुनिक पत्रकारिता में आद्यंत स्तंभ–लेखन के बहुतायत व बहुरूप निदर्शन मिलते है। हिन्दी की पत्रिकारिता में स्तम्भ–लेखन की अपनी ही एक समृद्ध परम्परा रही है। भारतेन्दु–युग के पत्रकारों ने जिस लेखकीय और जातीय दायित्व का निर्वाह किया, उसमें स्तम्भ–लेखन का किसी न किसी रुप में होना अनिवार्य था। लेकिन यह स्तम्भ–लेखन आधुनिक युग के नियमित स्तम्भ–लेखन के अनुरूप नहीं था। बल्कि नियमित शीर्षक के तहत न होते हुए भी, छोटी–छोटी टिप्पणियों, संदेषों, उत्कीर्ण प्रलेखों, शीर्ष पक्तियाँ या मंतव्यों के रूप में जो अक्सर छपता था, वह हिन्दी स्तम्भ–लेखन का प्राचीनतम प्रारूप ही था। इस तथ्य के विवादास्पद होने का एक दूसरा पहलू भी है– जैसा कि डॉ0 श्यामासुन्दर दुबे का अभिमत है कि भारतेन्दु–युग के स्तम्भ–लेखन को एहमियत नहीं दी जाती थी, उक्त मंतव्य व टिप्पणी अंश, उस जमाने की पत्र–पत्रिकाओं में जो कुछ छपता था, वह मात्र व्यंग्य के रूप में असर करता था और वह एक–प्रकार से उक्ति–वैचित्र्य के रूप में ही असर करता था और ''उसका वही स्थान होता था जो भोजन में चटनी का''[1]

मुख्य शब्द : डॉ0 श्यामासुन्दर दुबे, भारतेन्दु–युग, हरिशंकर परसाई।

प्रस्तावना

गहराई के साथ देखें तो डॉ0 श्यामसुन्दर दुबे का अभिमत उचित नहीं ठहरता। भारतेन्दु–युग की पत्रकारिता मात्र 'पाठकीय–आस्वाद' तक सीमित नहीं थी। बल्कि वह नवजागरण से समृद्ध जातीय प्रतिबद्धता से अनुप्राणित थी। भारतेन्दु ग्रंथावली का तीसरा भाग– 1 तो जैसे इन सारगर्मित रत्न का भंडार है। उनके प्रहसन–पंचक, स्त्रोन्त्र–पंचतंत्र, मुकरियाँ आदि जो नियमित कविवचनसुधा, हरिश्चंद्रिका, हरिश्चंद्र मैगजीन इत्यादि छपते थे, वे भले ही घोषित ढंग से स्तम्भ–लेखन न हो, मगर ये वही भूमिका निभाते थे जो आज के युग में परसाई व शरदजोशी के स्तम्भ निभाते है। उनमें एक तरफ जहाँ संस्कृतिक व सामाजिक समस्याओं की सुतीवां प्रस्तुति थी तो दूसरी तरफ अंग्रेजी सरकार के खिलाफ पुरजोर उद्घोष भी समाविष्ट था। परम्परागत शास्त्र और जातिवाद की आलोचना करते हुए प्रहसन–पंचक में भारतेन्दु लिखते हैं– ''हिन्दुओं का शास्त्र पनसारी की दुकान है और अक्षर कल्पवृक्ष हैं। इसमें से सब जात की उत्तमता निकल सकती है। पर दक्षिणा आपको बाएं हाथ से रख देनी पड़ेगी। फिर क्या है, फिर तो 'सबै जात गोपाल की।''[2]

उसी तरह विदेशियों के क्रूर आततायी दमन चक्र के खिलाफ 'अंग्रेजी स्तोत्र' में भारतेन्दु लिखते है– ''तुम बुद्धु हो क्योंकि वेद के विरूद्ध हो, और तुम कलिक हो क्योंकि शत्रु संहारकारी हो। अतएव हे दशा विधि रूप धारिन! हम तुमको नमस्कार करते हैं ...खजाना तुम्हारा पेट है, लालच तुम्हारी क्षुधा है, सेना तुम्हारा चरण है, खिताब तुम्हारा प्रसाद है, अतएवं हे विराट रूप अंग्रेज हम तुमको प्रणाम करते हैं।''[3]

भारतेन्दु के ये मंतव्य भले ही प्रकीर्ण आलेखों, मंतव्यों व टिप्पणियों को शक्ल में हो, ये दरअसल रचना हेतु, रचना प्रयोजन या लेखकीय दायित्व की दृष्टि से एक प्रकार का स्तम्भ–लेखन ही है।

भारतेन्दुयुगीन स्तम्भ को समृद्धि प्रदान करनेवालों में बालमुकुन्द गुप्त का नाम अन्यतम है। आधुनिक काल में स्तम्भ को नया रूप तथा एक नयी सार्थकता बालमुकुन्द गुप्त के माध्यम से ही मिली। उन्होंने अपनी अद्भुत प्रतिभा से स्तम्भ की पहचान की तथा अपने स्तम्भ के माध्यम से अंग्रेजी राज की शोषण नीति, अराजकता, कूटनीति, भारतीयों की व्याकुलता, पश्चिम के अन्ध अनुकरण की बढ़ती हुई प्रवृति पर करारा प्रहार भी किया है।

भारतेन्दुयुगीन जिन पत्रकारों ने स्तम्भ को अपार समृद्धि प्रदान की, उनमें बालमुकुन्द गुप्त के योगदान अविस्मरणीय है। उनका ''शिवशम्भु के चिट्ठे' हिन्दी संसार में काफी प्रसिद्ध है। हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास में ''शिवशम्भु के चिट्ठे'' को पहला स्तम्भ माना जा सकता है क्योंकि बालमुकुन्द के पहले अधिकांश सम्पादक राजद्रोह के भय से मौन थे। वैसी स्थिति में गुप्तजी उभरकर सामने आये। उन्होंने सबसे पहले 'हिन्दोस्तान' पत्र में 2 फरवरी 1891 ई0 में अंग्रेजों के विरोध में लिखे थे जिसके कारण उन्हें कालाकांकर के राजा रामपाल सिंह के 'हिन्दोस्तान' पत्र की नौकरी से हाथ धोना पड़ा था। इस पर टिप्पणी करते हुए पं0 बनारसीदास चतुर्वेदी ने लिखा है कि ''हिन्दी पत्रकार–कला के इतिहास में वह शायद पहला ही मौका था जबकि गवर्नमेन्ट के विरुद्ध बहुत कड़ा लेख लिखने के कारण किसी पत्रकार को पद से हटा दिया गया हो।''[4]

उनका पहला स्तम्भ 'भारत मित्र' में 11 अप्रैल 1930 ई0 को 'शिवशम्भु के चिट्ठे' और खत की पहली किष्त 'शिवशम्भु के चिट्ठे बनाम लार्ड कर्जन' प्रकाशित हुई जिसमें उन्होंने लार्ड कर्जन की कुकृत्यों का उद्घाटन किया। इसके उपरान्त उनका दूसरा चिट्ठा 'श्रीमान का स्वागत' स्तम्भ 26 नवम्बर सन् 1904 ई0 को प्रकाशित हुआ, फिर 17 दिसम्बर 1904 ई0 को 'भारत मित्र' में उनका तीसरा चिट्ठा 'वैसराय के कर्त्तव्य' छपा। इसके उपरान्त उनका चौथा स्तम्भ 'पीछे मत फेंकिये' 21 जनवरी सन् 1905 ई0 को 'भारत मित्र' में छपा इसके बाद छठा चिट्ठा 'दुराशोसन 1905 को भारतमित्र में प्रकाशित हुआ। फिर कुछ ही महिनों बाद उनका सातवा चिट्ठा 'विदाई–सम्भाषण' 2 सितम्बर सन् 1905 ई0 को 'भारत मित्र' में प्रकाशित हुआ और अंतिम चिट्ठा 'बंग विच्छेद' 21 अक्टूबर सन् 1905 ई0 को प्रकाशित हुआ।

हिन्दी पत्रकारिता के इतिहास के आलोक में अगर 'शिवशम्भु के चिट्ठे' की श्रृंखला का अध्ययन करें तो निम्नलिखित तथ्य उजागर होते है–

क) ये चिट्ठे नियमित और क्रमवार छपते थे।
ख) ये सीधे–सीधे पत्र के पाठकों को संबोधित थे।
ग) ये चिट्ठे पत्रकारिता की शैली में ही लिखे गये।
घ) इनमें लेखक का अपना दृष्टिकोण स्पश्टतः झलकता है।
ङ) इन चिट्ठों की अंर्तवस्तु का सीधा संबंध दैनेदिन व समकाल से है। समसामयिक परिस्थितियों (यथा जातीय, राष्ट्रीय, सामाजिक, जनता की अर्थिक दुर्दषा, नागरिकता का अधिकार अंग्रेजी प्रशासन की दुरवस्था इत्यादि) पर ही त्वरित प्रतिक्रिया के रूप में तीखी टिप्पणी की गई है।
च) संक्षेप में इसी अध्याय के प्रथमांश में निर्देशित पारिभाषिकी के समस्त परिलक्षण इन चिट्ठों में चरितार्थ दिखलाई देते हैं– अतएव 'शिवशम्भु के चिट्ठे' ही कदाचित् हिन्दी का पहला स्तम्भ लेखन है।

अध्ययन का उद्देश्य

हरिशंकर परसाई ने अपने स्तम्भ के माध्यम से समाज में व्याप्त अंधविश्वास, अवसरवादिता, रूढ़िया, समाजिक अन्तर्विरोध, प्रशासनिक भ्रष्टाचार, जातिवादी रवैया, राजनीतिक विसंगतियां आदि का कठोर विरोध किया है। उन्होंने एक ऐसे लोकतंत्र की नीव रखी अर्थात ऐसे हिन्दुस्तान का निर्माण करना चाहा, जहां सबको पेट भरने का अधिकार मिल सके, जहां सबको पढ़ने का अधिकार मिल सके, जहां भ्रष्टाचार न हो, जहाँ भाईचारा हो, सद्भावना हो, एक दूसरे के प्रति कट्टरता न हो, जहां सबको सम्मान के साथ जीने का अधिकार हो।

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भारतेन्दु–युग के बाद द्विवेदी युग का अवतरण होता है भारतेन्दु–युग में जो स्तम्भ की लेखन की परम्परा थी वह द्विवेदी युग में भी चलता रही। द्विवेदी युगीन स्तम्भ को समृद्धि प्रदान करनेवालों में, मुंशी नवजादक लाल पंडित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला', बाबू शिवपूजन सहाय और बालकृष्ण प्रेस के मालिक महादेव प्रसाद सेठ आदि थे। उन्होंने अपने समय में व्यंग्य स्तम्भ को प्रस्तुत करने में बड़ी भारी भूमिका निभाई थी। क्योंकि उन्हें मालूम था कि अंग्रेजी राज की शोषण नीति, अराजकता और कूटनीति से देश को निजात दिलाना है तो स्तम्भ लेखन जरूरी है इसीलिए मतवाला मण्डल के कवियों ने स्तम्भों के शीर्षकों का चुनाव किया और इसके लिए डिजाइन, ब्लॉक इत्यादि बनायें। जिसका नाम उन्होंने 'मतवाला की बहक', 'चलती चक्की' दिया जो ''श्रावणी संवत् 1980 शनिवार (23 अगस्त 1923 ई0) को 'मतवाला' का पहला अंक निकाला गया था जो साप्ताहिक, मगर मासिक पत्र की तरह शुद्ध और स्वच्छ निकला। बाजार में जाते ही पहले ही दिन धूम मच गई।''[5]

'मतवाले की बहक', 'चलती चक्की, 'मतवाले का चाबुक' आदि मतवाला के ये स्थायी स्तम्भ थे। ''कभी–कभी मतवाले का चुकूड़' चण्डू खाने की गप्प और 'रंगरूटो की फौज' भी प्रकाशित होता था। मुख्य पृष्ठ के लिए निराला कविता लिखते थे, सम्पादकीय लेख चलती चक्की तथा अन्य विनोदपूर्ण टिप्पणियाँ शिवपूजन सहाय लिखते थे नवजादक लाल 'मतवाला की बहक' नामक स्तम्भ व्यंग्यात्मक टिप्पणियों से सजते थे''[6] इस प्रकार मतवाल के प्रकाशन से ही नये प्रयोग का हिन्दी पत्रकारिता में हुई। उस वक्त पत्रकारिता के जरिये बड़ा ही अहम कदम उठाया गया और एक साहित्यिक क्रांति का आगाज हुआ।

परसाई का स्तम्भ लेखन, भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालमुकुन्द गुप्त और प्रतापनारायण मिश्र की परम्परा से जुड़ी हुई थी। वे अपने समाज और समय के प्रहरी बन रहे थे। उनका लेखन 'प्रहरी' की आवाज बन गया था। परसाई के लेखन ने जितना लोगो को 'जागते रहो' अर्थात समाज को जितना जगाने का काम परसाई ने अपने स्तम्भों से किया उतना स्वतंत्रता के बाद किसी अन्य साहित्यकार ने नहीं किया। नामवर सिंह ने अपने पत्र में लिखा था कि ''परसाई जी पिछले चार दशकों से सबसे महत्वपूर्ण गद्य लेखक है जिन्होंने इतने बड़े पैमाने पर पाठकों में प्रगतिशील और स्वस्थ्य चेतना जगाने का काम किया है। पाठकों को शिक्षित बनाने की दिशा में ऐसा सशक्त प्रयास शायद ही किसी अन्य लेखक ने इस बीच किया हो।''[7]

परसाई जी ने दुनिया की अव्यवस्था और विसंगति से लड़ने के लिए कॉलम को एक हथियार के रूप में चुना थे। सन् 1947 से परसाई अपने स्तम्भ–लेखन की यात्रा आरम्भ करते हैं। व्यंग्य स्तम्भ–लेखन की प्रेरणा उन्हें पं0 रामेश्वर गुरु से ही मिली। ''आरम्भ में गुरूजी के प्रभाव से परसाई जी ने भी कविताएं लिखीं। उनकी कुछ कविताएं कवि रामविलास शर्मा के पास सुरक्षित भी थी। पर परसाई को लगा कि कविता में वे अपने मन की सारी बातें नहीं कह पा रहे हैं।''[8] इसीलिए गुरुजी के परामर्श पर उन्होंने स्तम्भ लेखन को अपने लेखन का आधार बनाया।

हरिशंकर परसाई के प्रथम स्तम्भ 'सुनो भाई साधो' पर नजर डाले तो उनमें अंधविश्वास, अवसरवादिता, रुढ़ियाँ, सामाजिक अंतर्विरोध, प्रशासनिक, भ्रष्टाचार, जातिवादी रवैये का विरोध किया गया है। इसी क्रम में 'अरस्तू की चिट्ठी' में राजनीतिक विसंगतियों को दिखाया गया है। यह विद्रोही तेवर लिये हुए था ये चिट्ठियाँ जाहिर करती थी कि समकालीन राजनीति में नानाविध विसंगतियां है। जनयुग में सन् 1965 में इन्होंने 'ये माजरा क्या है' स्तम्भ लेखन के जरिये राजनीतिक विसंगतियों के साथ–साथ अन्तर्राष्ट्रीय विसंगतियों को भी दिखलाया। उनके लोकप्रिय स्तम्भ 'कबिरा खड़ा बजार में' एक अलग स्थान रखता है, जिसमें देश–विदेश के प्रमुख व्यक्तियों से कबीर का काल्पनिक साक्षात्कार प्रस्तुत किया जाता था। उनकी अन्तिम स्तम्भ 'पूछिए परसाई से' में परसाई पाठकों से रूबरू होते थे और उनके प्रश्नों के उत्तर देते थे। इन प्रश्नोत्तरों के माध्यम से देश की समकालीन परिस्थितियों पर विस्तृत विवेचना भी करते थे। इनमें परसाई ने सम्बोधित शैली में भी समसमायिक समस्याओं पर गहराई से विचार करते हुए अपना स्पश्ट अभिमत व दृष्टिकोण को प्रस्तुत करते थे।

परसाई की रचनाओं को इकट्ठा करने व प्रकाशित कराने का कठिन और जिम्मेदारीपूर्ण कार्य संपादन मंडल के जिन सदस्यों ने किया वे है– कमला प्रसाद, धनंजय वर्मा, श्यामसुन्दर मिश्र, मलय और श्याम कश्यप। परसाई रचनावली राजकमल प्रकाशन से सन् 1985 में प्रकाशित की गई है जिसके खण्ड पांच और छः में स्तम्भ लेखन की लगभग सभी सामग्री को संपादित कर प्रस्तुत किया गया।

निष्कर्ष

अन्ततः परसाईजी के स्तम्भ गहन विचारशीलता के दर्पण है। परसाईजी के स्तम्भों का दायरा अत्यन्त ही व्यापक है, जो घटना आदमी के लिए केवल घटना होती है वह परसाईजी के लिए प्रतिभासम्पन्न एवं संवेदनशील यथार्थ बन जाती है। परसाई जी तत्कालीन समस्याओं को अपने स्तम्भ का आधार बनाया है। उन्होंने रोजमर्रे की घटनाओं को केवल विश्लेषण नहीं किया बल्कि उसपर गहनता से विचार भी किया। धंनजय वर्मा के अनुसार ''ऐसे लेखक अपने युग की साहित्यिक अभिरूचि को ही नहीं, सामाजिक अभिवृति को भी बदल देते है''[9] यों तो साहित्यिक अभिरूचि का बदलाव पूरी सामाजिक संस्कृति और उसके सरोकारों का बदलाव होता है। इस लिहाज से परसाई के इस लेखन से न केवल समकालीन साहित्यिक परिदृश्य में सांस्कृतिक और बौद्धिक चेष्टाओं के प्रति हमारी रूचि में तब्दीली आयी है बल्कि वह परिष्कृत और गहन रूप से मानवीय और सामाजिक हुई है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. *दुबे, श्यामसुन्दर (सं0), लोकमत समाचार, संस्करण– 1998ए अंक– 3, अप्रेल, पृष्ठ संख्या– 13*
2. *सुरेशकांत, हिन्दी गद्य लेखन में व्यंग्य और विचार, राधाकृष्ण प्रकाशन, संस्करण– 2004,पृष्ठ संख्या– 85*
3. *वही, पृष्ठ संख्या– 85*
4. *मिश्र कृष्ण बिहारी, 'हिन्दी पत्रकारिता', प्रकाशन भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, चौथा संस्करण– 2004, पृष्ठ संख्या– 259*
5. *वही, पृष्ठ संख्या – 259*
6. *वही, पृष्ठ संख्या– 259*
7. *जैन, कान्ति कुमार, 'तुम्हारा–परसाई', प्रकाशन वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण– 2004, पृष्ठ संख्या– 64*
8. *वही, पृष्ठ संख्या– 64*
9. *परसाई, हरिशंकर, रचनावली खण्ड– 5, कमलाप्रसाद तथा अन्य (सं0), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तीसरा संस्करण– 2004, भूमिका से*